अशोका कुमार ठाकुर

बनाम

भारत संघ व अन्य अन्य

मई 17, 2007

(डॉ. अरिजीत पासायत और लोकेश्वर सिंह पांटा, जे जे.)

वृहद न्यायापीठ को संदर्भित-93 वें संविधान संशोधन की संवैधानिकता एवं केंद्रीय शैक्षणिक संस्थान (भरती में आरक्षण) अधिनियम, 2006, उच्चतम न्यायालय में चुनौती दी गई सम्मिलित मुद्दों की महत्ता को देखते हुए प्रश्न तैयार किए गए एवं वृहद पीठ को संदर्भित किये गए-93 वां संविधान संशोधन अधिनियम, 2005- शैक्षणिक संस्थान (भरती में आरक्षण) अधिनियम, 2006-भारत का संविधान, 1950-अनुच्छेद 15(5) और 145(3) उच्चतम न्यायालय नियम, 1966-आदेश 35।

93 वें संविधान संशोधन अधिनियम, 2005 द्वारा संविधान के भाग 3 में अनुच्छेद 15(5) को जोडा गया था। इसके द्वारा सरकार को सशक्त बनाया गया ताकि वे शैक्षणिक संस्थानों में आरक्षण का विशेष प्रावधान कर सके। केंद्रीय शैक्षणिक संस्थानों (भरती में आरक्षण) अधिनियम, 2006 तत्पश्चात लागू किया गया था। वर्तमान रिट याचिकाएँ उक्त को चुनौती देते हुए दायर की गई थीं। भारत संघ का यह कथन रहा कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 145(3) एवं उच्चतम न्यायालय के नियमों के आदेश 35 को

दृष्टिगत रखते हुए उक्त याचिकायें संविधानिक पीठ द्वारा सुनी जानी चाहिये क्योंकि उक्त में ना केवल विधि का महत्वपूर्ण प्रशन उठता है अपितु संविधान की व्यख्या भी निहित है।

याचिकाकर्ताओं द्वारा उक्त कथन पर इस आधार पर आपत्ति जताई कि जो मुद्दे उठाये गये है, वे इस न्यायालय के विभिन्न फैसलों, विशेषकर इंदरा साहनी बनाम भारत संघ व अन्य, [1992] सप 3 एससीसी 217 में अंतरनिहित है तथा कोई भी विधि का महत्वपूर्ण प्रश्न सम्मिलित नहीं है जैसा कि भारत संघ द्वारा दायर जवाबी हलफनामा से स्पष्ट है।

प्रश्नों को तैयार कर तथा मामले को वृहद पीठ को भेजते हुये न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि:

1. भारतीय संविधान के अनुच्छेद 145(3) और उच्चतम न्यायालय नियम, 1966 के आदेश 35 से अप्रभावित रहते हुये इसमें शामिल मुद्दों के महत्व एवं राष्ट्र के सामाजिक जीवन पर पड़ने वाले प्रभाव एवं प्रश्नों की जटिलताओ को देखते हुये, यह उचित हैं कि मामले की सुनवाई एक वृहद पीठ द्वारा की जानी चाहिए।

2. 93 वें संविधान संशोधन अधिनियम 2005 की वैधता पर विचार करने के लिए, संविधान के अनुच्छेद 15(4) और 15(5) का दायरा, न्यायिक समीक्षा का दायरा, सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्गो को जाति/समुदायों की इकाइयों के रूप में सूचीबद्ध करना, सामाजिक और

शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्गों/अन्य पिछड़े वर्गों को 27% आरक्षण का औचित्य एसईबीसी/ओबीसी की 'क्रिमी लेयर' की अवधारणा और इसकी प्रयोज्यता तथा केंद्रीय शैक्षणिक संस्थान (भरती में आरक्षण) अधिनियम, 2006 की संवैधानिक/वैधता पर विचार करने के लिए मामले को वृहद पीठ को संदभित किया गया।

दीवानी मूल क्षेत्राधिकार: रिट याचिका (दीवानी) संख्या 265/2006 के साथ

रिट याचिका दीवानी सं. 269/2006, 598/2006, 35/2007, 231/2007, 53/2007 एवं 29/2007

जी. ई. वाहनवती, महान्यायधिकर्ता, गोपाल सुब्रमण्यम, एस.जी., के.एन. बालगोपाल, नागालैंड के ए.जी., पी.पी राव, के परासरन, आर. शुनमुगासुंदरम, वी. कनकराज, राकेश द्विवेदी, इंद्रा जयसिंह, प्रो रवि वर्मा कुमार, राम जेठमलानी, एफ.स. नरीमन, मुकुल रोहतगी, हरीश एन. साल्वे, के.के वीनुगोपाल, रवींद्र श्रीवास्तव और कैलाश वासदेव, वरिष्ठ अधिवक्ता, विवेक के तन्खा, पूजा धर, रोहन थवानी, जोसेफ पुक्कट्ट, प्रशांत कुमार, एम.ल. लाहोटी, डी.एस. चड्ढा, अभिषेक गुप्ता, अंशुमन अशोक, पुरुषोत्तम त्रिपाठी, अभिषेक कुमार, सुब्रमण्यम प्रसाद, अनिल श्रीवास्तव, ऋतुराज विश्वास, डॉ कैलाश चंद, एस. वल्लीनायगम, एस. प्रभु रामसुब्रमण्यम, वी.जी. प्रगसम, एस. वसीम ए. कादरी, डी. एस. माहरा, के.एन.

मधुसूदनन, आर. सतीश, जनार्दन दास, श्वेतकेतु मिश्रा, विमला सिन्हा, अनुकूल राज, गोपाल सिंह, जी प्रकाश, धर्मेंद्र कुमार सिन्हा, मनोज सक्सेना, रजनीश कु सिंह, राहुल शुक्ला, टी वी जॉर्ज, अंशुमन कौशिक (कॉर्पोरेट लॉ ग्रुप के लिए), एस.एस. शिंदे, वी एन. रघुपति, मंजीत सिंह, हरिकेश सिंह, रंजन मुखर्जी, एस. सी. घोष, सुपर्णा श्रीवास्तव, पूजा मथानी, राजेश श्रीवास्तव, अतुल झा, डी के सिन्हा, अरुणेश्वर गुप्ता, नवीन कुमार सिंह, मुकुल सूद, शाश्वत गुप्ता, ए. सुब्बा राव, अजय पाल, प्रीति सिंह, सुखदा, एस. के स्वामी, विकास रोजीपुरा, बालू, ई.सी. विद्यासागर, कुमार राजेश सिंह, बी.बी. सिंह, रणबीर यादव, एस. बालाजी, अविजीत रॉय (कॉर्पोरेट लॉ ग्रुप के लिए) ख नोबिन सिंह, ए. मरियापुथम (अर्पुथम, अरुणा एंड कंपनी के लिए)। प्रशांत भूषण, विश्वजीत सिंह, एम.एल. लाहोटी, पवन के. शर्मा, पूनम लाहोटी, हिमांशु शेखर, महालक्ष्मी पवनी, शशि एम. कपिला, गोपाल शंकरनारायणन, शिल्पी कौशिक, इंदु मल्होत्रा, सुशील कुमार जैन, पुनीत जैन, एच. डी थानवी. सारद सिंघानिया, क्रिस्टी जैन, किरण सूरी, एस. जे अमित, रामेश्वर प्रसाद, सी. बी. एन. बाबू, विनेश सोलशे, अर्जुन गर्ग, एम. मामन, राजू श्रीवास्तव, सी.जी. सोलशे, वी.के. बिज्जू, डी.के. गर्ग, महालक्ष्मी पवनी, जी बालाजी, सुब्रह्मणयम प्रसाद, सुषमा सूरी, अंकित सिंघल, निखिल नईयर एवं इ. विघ्या सागर उपस्थित पक्षों की ओर से याचिकाकर्ता अशोक कुमार ठाकुर याचिकर्ता स्वयं याचिका सं (सी) सं. 265 में एवं एम.एम. मित्तल, व्यक्तिगत रूप से आवेदक आई.ए. सं. 8 में।

न्यायालय का निर्णय इनके द्वारा दिया गया था-

डॉ, अरिजीत पासायत, जे.

1. इन याचिकाओं की सुनवाई के दौरान विद्वान महान्यायाभिकर्ता द्वारा निवेदित किया गया कि भारत के संविधान, 1950 (संक्षेप में 'संविधान') के अनुच्छेद 145(3) और उच्चतम न्यायालय नियम, 1966 (संक्षेप में 'नियम') के आदेश 35 के अधिदेश को देखते हुये इन मामलों को कम से कम पाँच माननीय न्यायाधीशों की पीठ द्वारा सुना जाना चाहिये। यह प्रस्तुत किया गया कि याचिकाएं केवल विधि के महत्वपूर्ण प्रश्न नहीं उठाती हैं, बल्कि संविधान की व्याख्या भी शामिल है।

2. दूसरी ओर याचिकाकर्ताओं के विद्वान वकील ने यह प्रस्तुत किया कि भारत संघ की ओर से दायर जवाबी हलफनामे में यह स्पष्ट रूप से अंकित किया है कि उसके अनुसार कोई विधि का प्रश्न महत्वपूर्ण प्रकृति का सवाल शामिल नहीं है और जो मुद्दे उठाये गये हैं, वे इस न्यायालय के विभिन्न निर्णय, विशेष रूप से, इंदरा साहनी बनाम भारत संघ व अन्य, [1992] सप. 3 एससीसी 217 में शामिल किये गये है। याचिकाकर्ताओं के विद्वान वकील ने निवेदित किया कि ऐसा है तो विद्वान महान्यायाभिकर्ता के वर्तमान के इस रुख में कि विधि के महत्वपूर्ण प्रश्न शामिल हैं, में कोई सार नहीं है उनके अनुसार, मामलों का निर्णय दलीलों और उनकी स्वीकार्यता पर किया जा सकता है।

3. श्री के. परासरन और श्री राम जेठमलानी, विद्वान वरिष्ठ वकील समस्त प्रत्यर्थियों में से एक की ओर से, ने प्रस्तुत किया कि वे महान्यायाभिकर्ता के इस रुख का समर्थन करते हैं कि मामले की सुनवाई कम से कम पांच माननीय न्यायाधीशों की पीठ द्वारा की जानी चाहिए। हालाँकि उन्होंने कहा कि जवाबी हलफनामे में लिया गया रुख निर्धारक नहीं हो सकता है। संविधान और/या केंद्रीय शैक्षणिक संस्थान (भरती में आरक्षण) अधिनियम, 2006 (संक्षेप में 'अधिनियम') के प्रावधानों की व्याख्या इन मामलों में व्याख्या के लिए आती है।

4. हालाँकि, याचिकाकर्ताओं के विद्वान वकील ने कथन किया कि संविधान के अनुच्छेद 15(5) के दायरे और दायरे से संबंधित जटिल मुद्दे एवं 93 वें संविधान संशोधन अधिनियम, 2005 की वैधता संबंधित मुद्दे शामिल है। यह चिन्हित किया गया कि सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्गों के लिए बेहतर शैक्षिक सुविधाएं प्रदान करने की तथाकथित चिंता एक मुखौटे के अलावा और कुछ नहीं है। जिसका उद्देश्य एक राजनीतिक खेल खेलना है और जिसे आमतौर पर "वोट राजनीति" के रूप में स्वीकार किया जाता है। इसका उद्देश्य सामाजिक सशक्तिकरण के लिए इतना नहीं है, जितना वोट बैंक बनाने के लिये है। सामाजिक सशक्तिकरण के नाम पर, जो करने का इरादा है, वह जातिगत विभाजन पैदा करना है जिसके विनाशकारी प्रभाव होंगे। इसका उद्देश्य सामाजिक सशक्तिकरण और/या वंचितों को सहायता प्रदान करना नहीं है। यदि वास्तव में ऐसा

था, तो सामाजिक और आर्थिक पिछड़ेपन पर जोर दिया जाना चाहिए था। अगर किसी वर्ग को सुरक्षा की आवश्यकता है, तो वह सामाजिक और आर्थिक रूप से पिछड़े लोगों का वर्ग है। यह भी इंगित किया गया है कि संविधान के निर्माताओं ने आरक्षण के लिए एक विनिर्दिष्ट अवधि का संकेत दिया था। उन्होंने महसूस किया था कि यह अवधि सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़ी जातियों के साथ हुये काल्पनिक रूप से अन्याय से निपटने के लिए पर्याप्त है। लेकिन अप्रत्यक्ष उद्देश्यों के साथ यह अवधि बढ़ाई जा रही है। यह प्रस्तुत किया गया है कि यह संविधान का उद्देश्य नहीं हो सकता है। यह भी प्रस्तुत किया गया है कि उच्च शिक्षा में आरक्षण की कोई गुंजाइश नहीं है और यह अधिनियम उच्च शिक्षा प्रदान करने वाले शैक्षणिक संस्थानों में आरक्षण का अधिकार देता है और यह अपने आप में असंवैधानिक है। इसके अलावा, "पिछड़े वर्गों" की पहचान करने के लिए बुनियादी आंकडा अभी तक इस न्यायालय के समक्ष नहीं रखा गया है, हालांकि इस न्यायालय द्वारा इस तरह के आंकडे की अपर्याप्तता और गैर-उपलब्धता पर प्रकाश डाला गया था। यह प्रस्तुत किया जाता है कि यह इस न्यायालय द्वारा जगदीश नेगी, अध्यक्ष, उत्तराखंड जन मोर्चा व अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य [1997] 7 एससीसी 203 ने अभिनिर्धारित किया कि राज्य नागरिको के कुछ वर्गों को हमेशा के लिए सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्गों के रूप में मानने के लिये स्थायी रूप से बाध्य नहीं किया जा सकता है। इन परिस्थितियों में, यह प्रस्तुत

किया गया है कि रिट याचिकाओं का निस्तारण वर्तमान में विद्यमान सामग्री के आधार पर किया जाना चाहिए।

5. हम पहले भारत संघ द्वारा दायर जवाबी हलफनामे के प्रभाव से निपटेंगे। न्यायिक दृष्टांत संजीव कोक मैन्युफैक्चरिंग कंपनी बनाम मेसर्स भारत कोकिंग कोल लिमिटेड व अन्य [1983] 1 एससीसी 147 में अन्य बातों के साथ-साथ इस प्रकार अभिनिर्धारित किया गया:

> "25. श्री अशोक सेन ने भारत कोकिंग कोल लिमिटेड की ओर से दायर किये गए पहले के हलफनामों की ओर ध्यान आकर्षित किया एवं उनमें कौकिंग कोल माईन्स (राष्ट्रीयकरण) अधिनियम, 1972 में से कुछ कोकिंग ऑवन संयत्रों के अपवर्जन के लिए उसमें दिए गए कथित विरोधाभासी कारणों पर कडी टिप्पणी की।
>
> लेकिन, अंतिम विश्लेषण में, हमे वास्तव में प्रतिवादी द्वारा दायर किए गए शपथ पत्रों में अधिनियम का औचित्य सिद्ध करने के लिए और उसे पोषित रखने के लिए दिए गए कथनों के खोखलेपन या आत्मनिंदात्मक प्रकृति से स्वयं को चिंतित नहीं करना है। न्यायालय में दायर किए गए शपथपत्रों में साक्षी उन पक्षों के लिए बोल सकते हैं जिनकी ओर से वे सशपथ बयान दे रहे हों। वे संसद के लिए नहीं बोलते हैं। काई भी संसद के लिए नहीं बोल सकता और संसद कभी भी न्यायालय के सामने नहीं

होती है। जब संसद में वह कह दिया जो कहने का उसका आशय था उसके बाद सिर्फ न्यायालय ही यह कह सकता है कि संसद के कथन का क्या अर्थ था, कोई और नहीं। एक बार एक क़ानून संसद भवन से निकल जाता है तो न्यायालय ही एकमात्र प्रामाणिक आवाज है जो संसद को प्रतिध्वनित (व्याख्या) कर सकती है। इस प्रकार न्यायालय कानून की भाषा और अन्य अनुमेय सहायता के संदर्भ में करेगी। कार्यपालीका सरकार, उनकी समझ में संसद ने क्या कहा है या उनका क्या कहने का आशय था या उनके अनुसार संसद का क्या प्रयोजन था या वो सारे तथ्य एवं परिस्थिति जो उनकी दृष्टी में उस अधिनियम तक ले गए, को न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत कर सकती है। जब वे ऐसा करते हैं तो वे न्यायालय की ओर से नहीं बोल रहे होते हैं। संसद के किसी भी कानून को कार्यपालिका सरकार द्वारा संसद के अभिप्राय की समझ या गलत समझ की वजह से या उनके (सरकार के) प्रवक्ता द्वारा प्रसांगिक परिस्थितियां प्रकाशित न कर खोलखले व आत्म पराज्य शपथ पत्रों में लिप्त होने की वजह से रदद नहीं किया जा सकता है। वे संसद को बाध्य नहीं करते हैं और न कर सकते हैं। कानून की वैधता को राज्य की ओर से दायर शपथ पत्रों के आधार पर ही विचरित नहीं किया जाना चाहिये बल्कि न्यायालय द्वारा अंततः पाई गई सभी प्रासांगिक

परिस्थितियों विशेषकर विधायिका ने जो स्वंय कथन किया है, उससे क्या एकत्रित किया जा सकता है, उनके संदर्भ में विचरित किया जाना चाहिये। हमने हमारे द्वारा पाए गए तथ्यों का उल्लेख किया है एवं हमें नहीं लगता है की अनुच्छेद 14 द्वारा प्रत्याभूत अधिकार का कोई उल्लंघन हुआ है।"

6. न्यायाधिपति होम्स को उद्धृत करते हुएः विधि का जीवन तर्क नहीं रहा है, अनुभव रहा है। पुरूषों को शासित करने के नियमों के निधारण में विधि की महसूस की गई आवश्यकताओं, प्रचलित नैतिक और राजनीतिक सिद्धांतों, सार्वजनिक नीति के अंतर्ज्ञान, स्पष्ट या अचेतन, यहां तक कि न्यायाधीशों द्वारा अपने अनुयायियों के साथ साझा किए जाने वाले पूर्वाग्रहों का युक्तिवाक्य की तुलना अधिक सरोकार रही है।

7. अनुच्छेद 145(3) व नियम के आदेश 35 के प्रभाव से अप्रभावित होते हुए, अंर्तनिहित मुद्दों की महत्ता, संपूर्ण राष्ट्र के सामाजिक जीवन पर इसके संभावित प्रभाव और प्रश्नों की जटिला के मध्य नजर यह उपयुक्त है कि प्रकरण को वृहद न्यायापीठ द्वारा सुना जाए। रिट याचिकाओं में प्रमुख चुनौती इस प्रकार हैंः

(1) संविधान के 93 वें संशोधन अधिनियम, 2005 को चुनौती, जिसके द्वारा संविधान के भाग 3 में अनुच्छेद 15(5) को जोड़ा गया है।

(2) "सकारात्मक कायर्वाही" के रूप में आरक्षण की नीति को चुनौती।

(3) "जाति आधारित"आरक्षण या "जाति आधारित" सकारात्मक कार्यावाही को चुनौती।

(4) अधिनियम को चुनौती।

8. बुनियादी मुद्दे जिन पर वृहद पीठ द्वारा विचार किए जाने की आवश्यकता है, निम्नलिखित हैः

93 वां संविधान संशोधन अधिनियम, 2005

(1) क्या 93 वां संविधान संशोधन अधिनियम, 2005 और संविधान का अनुच्छेद 15(5) संविधान की मूल संरचना का उल्लंघन करने के रूप में असंवैधानिक हैं?

(2) यदि संशोधन वैध है, तो इसकी व्याख्या कैसे की जाए और कैसे लागू किया जाये?

(3) क्या 93 वां संशोधन जहां तक सरकार को यह अधिकार देता है कि वे शैक्षणिक संस्थान (निजी शैक्षणिक संस्थानों सहित) में आरक्षण के माध्यम से विशेष प्रावधान संविधान की मूल संरचना का उल्लंघन करते है?

(4) क्या 93 वां संशोधन सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्ग के लिए विशेष प्रावधान करने की, बिना परिस्थितियों का संकेत देते हुये

कि कब इस तरह के प्रावधान किये जा सकते हैं और इस तरह के विशेष प्रावधान की सामग्री या अवधि पर किसी भी सीमा को लागू किये बिना, सरकार को निरंकुश शक्ति देता है और इसलिये नागरिकों के समानता के अधिकार को पूरी तरह से खत्म करता है और इस प्रकार संविधान की बुनियादी संरचना का उल्लंघन है?

(5) क्या पी.ए. इमामदार बनाम महाराष्ट राज्य, (2005) 6 एससीसी 537 में पारित निर्णय, जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया कि गैर अल्पसंख्यक संस्थानों को भी समान रूप से सुरक्षा प्राप्त है, के बाद अनुच्छेद 19(1)(g) की सुरक्षा से गैर अल्पसंख्यक संस्थानों को वंचित रखना, संविधान के नाजुक संतुलन को बिगाड़ता है एवं अन्य बातों के साथ-साथ धर्मनिर्पेक्षता के सिद्धांतों के साथ असंगत है और इस प्रकार संविधान की बुनियादी संरचना का उल्लंघन है।

अनुच्छेद 15(4) और 15(5) का और दायरा :-

(1) संविधान के अनुच्छेद 15(4) और 15(5) की वास्तविक सीमा और दायरा क्या है?

(2) यदि अनुच्छेद 15(5) वैध है, तो इसका वास्तविक सीमा और दायरा क्या है?

(3) संविधान के अनुच्छेद 15(4) और 15(5) में "विशेष प्रावधान" शब्द का क्या अर्थ है? क्या इसमें विशेष रूप से उच्च शैक्षिणक संस्थानों,

पेशेवर और तकनीकी शिक्षा (विशेष रूप से राष्ट्रीय स्तर की शिक्षा) या महत्व की और विशेषज्ञता सुपर स्पेशलिटी के रूप में वर्गीकृत पाठ्यक्रमों में सीटों के आरक्षण द्वारा कोटे शामिल है। क्या यह सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्गों की उन्नित का एक स्वीकार्य उपाय है?

(4) यदि उपरोक्त प्रश्नों के उत्तर सकारात्मक है, तो राज्य के किसी भी "सकारात्मक कार्यवाही" की आवश्यक सामग्री क्या है जिसमें प्रस्तावित नामों की "प्रकृति और सीमा" और उन पर सीमाएं शामिल है, ताकि अनुच्छेद 14, 15, 29(2) और अनुच्छेद 15(4) और 15(5) में इसके पहलू के बीच अधिकारों को संतुलित करे?

(5) क्या सकारात्मक कार्यवाही की एक तर्कसंगत नीति जो पिछडे वर्गों सहित सभी नागरिकों के निरक्षर वर्गों को मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा प्रदान करना सुनिश्चित करेगी, अनुपस्थित है और यदि ऐसा है तो क्या एसईबीसीएस के पक्ष में सकारात्मक कार्यवाही भेदभावपूर्ण और असंवैधानिक है?

(6) अनुच्छेद 15(4) और 15(5) में नागरिकों के किसी भी "सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछडे वर्ग की उन्नति के लिए" शब्दों का क्या अर्थ है। अनुच्छेद 15 के खण्ड (4) और (5) में शैक्षिक पिछडेपन को मापने का पैमाना क्या है?

(7) क्या "नागरिकों के सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछडे वर्गों" की अभिव्यक्ति को "सामाजिक और आर्थिक रूप से पिछड़े वर्गों" द्वारा प्रतिस्थापित करने से संवैधानिक इरादो और उद्देश्यों की पूर्ति होगी?

न्यायिक समीक्षा का दायरा :-

(1) इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि केन्द्रीय शैक्षणिक संस्थानों में आरक्षण के माध्यम से विशेष प्रावधान संसद द्वारा अधिनियमित कानून द्वारा बनाया गया है और अनुच्छेद 15(5) के समक्ष प्रावधान राज्य को कानून द्वारा ऐसे प्रावधान करने की शक्ति प्रदान करते है, न्यायिक समीक्षा का दायरा प्रतिबंधित है या नहीं?

(2) अनुच्छेद 15(4) और 15(5) के अधिदेश के अनुसरण में, अन्य बातों के साथ-साथ सुब्रह्मणयम स्वामी (डॉ0)/निदेशक, सीबीआई व अन्य [2005] 2 एससीसी 317, को ध्यान में रखते हुए, संसद द्वारा जो आरक्षण प्रदान करते हुए जो अभिनियम बनाया गया है उसकी न्यायिक समीक्षा के मापदण्ड और सीमाएं क्या है?

जाति/समुदायों की इकाइयों के संदर्भ में सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्गों की सूची बनाना (1) क्या केवल या मुख्यतः जाति के आधार पर आरक्षण अनुच्छेद 15 के तहत स्वीकार्य नहीं है?

(2) क्या कोई आरक्षण जो अपने लाभार्थियों की पहचान करने के लिए "जाति" पर महत्वपूर्ण रूप से निर्भर करता है, स्वाभाविक रूप से विभाजन करता है और राष्ट्र की एकता और अखण्डता के साथ असंगत है?

(3) यदि उपरोक्त प्रश्न (1) और (2) का उत्तर सकारात्मक है, तो "विशेष प्रावधानों" के लाभार्थियों की पहचान, चयन शामिल या बाहर कैसे, किस तरह और किस आधार पर किया जायेगा?

(4) क्या भारत संघ की "विशेष प्रावधानों" के लाभार्थियों की पहचान करने और उन्हें मुआवजा देने की प्रवृति, तरीका और सभी जाति और पिछडेपन को कायम रखती है?

(5) क्या "जाति आधारित" आरक्षण अनुच्छेद 15 के तहत सकारात्मक कार्यवाही का एक स्वीकार्य रूप है? यदि उपरोक्त प्रश्न का उत्तर सकारात्मक है, तो उस "वर्ग" की पहचान के लिये अनुमेय मापदंड क्या है जिन्हें अनुच्छेद 15 के तहत सकारात्मक कार्यवाही कार्यक्रम के तहत लाभ बढाया जाना है?

(6) क्या राज्य की आरक्षण नीति जिसमें सतत समीक्षा तंत्र का अभाव है, अनुच्छेद 14, 15, 21 और 29(2) का उल्लंघन है?

(7) क्या, इन्द्रा सहानी (सुप्रा) मामले में फैसले के बाद, अनुच्छेद 16(4) के प्रयोजनों के लिये जाति के आधार पर पिछडे वर्गों का वर्गीकरण संवधिान के अनुच्छेद 15(4) और 15(5) पर समान रूप से लागू होगा?

क्या सामाजिक शैक्षणिक पिछडा वर्ग/अन्य पछिड़े वर्ग में 27% आरक्षण उचित है?

(1) क्या यह अधिनियम राज्य की "बाध्यकारी आवश्यकता" के बावजूद और असंबद्ध सभी शैक्षणिक संस्थानों (निजी सहायता प्राप्त संस्थानों सहित) में 27% आरक्षण को अनिवार्य करता है और बिना किसी समय सीमा के और बिना किसी गणना योग्य आंकड़े के ओबीसी के रूप में व्यक्तियों की पहचान करना संविधान के अनुच्छेद 14, 15, 21(ए) और 29(2) का उल्लंघन है?

(2) इन्द्र सहानी के मामले (सुप्रा) द्वारा अधिकृत प्रतिशत की भीतर केन्द्रीय शैक्षणिक संस्थानों में ओ बी सी के लिये 27% आरक्षण के माध्यम से विशेष प्रावधान और यह सुनिश्चित किया गया है कि वहां सीटो में वृद्धि की जायेगी ताकि संख्या कम न हो। गैर आरक्षित वर्ग के लिये कितनी सीटें उपलब्ध की है, क्या ऐसे प्रावधान को संवैधानिक माना जा सकता है?

(3) क्या केन्द्रीय शैक्षणिक संस्थान (भरती में आरक्षण) अधिनिमय 2006, (2007 का अधिनियम संख्या 5) संविधान के अनुच्छेद 14, 15(1), 19, 21 और 29(2) का उल्लंघन है?

सामाजिक रूप से उन्नत व्यक्ति/वर्ग या एसईबीसी/ओबीसी की क्रीमी लेयर:-

(1) क्या इन्द्र सहानी के मामले (सुप्रा) में सार्वजनिक रोजगार के संदर्भ में प्रतिपादित "क्रीमी लेयर" की अवधारणा राज्य द्वारा बनाये गये कानून द्वारा प्रदान की गई शिक्षा के लिए आरक्षण के विशेष प्रावधान पर लागू होगी?

(2) क्या अनुच्छेद 14 व अनुच्छेद 15(5) के तहत औपचारिक समानता बनाम वास्तविक समानता को संतुलित करने में "क्रीमी लेयर" को बाहर रखा जाना चाहिये या नहीं?

(3) क्या अनुच्छेद 16(4) के तहत नियुक्तियों या पदों के आरक्षण से बाहर करने के उद्देश्य से इन्द्रा सहानी के मामले (सुप्रा) में तैयार की गई सामाजिक रूप से उन्नत व्यक्तियो/वर्गों या एस ई बी सी जातियों/समुदायों की क्रीमी लेयर की अवधारणा को अनुच्छेद 15(4) और अनुच्छेद 15(5) के तहत उच्च शिक्षा और शैक्षणिक संस्थानों में सीटों पर प्रवेश के लिये शिक्षा में आरक्षण लागू है?

(4) क्या अधिनियम के प्रावधान जहां तक आरक्षण के लाभार्थियों "क्रीमी लेयर" की पहचान और बहिष्कार को बाहर नहीं करते है या प्रावधान नहीं करते हैए अनुच्छेद 15 और 29(2) के उल्लंघन में आते हैं?

2006 अधिनियम की संवैधानिकता/वैधता

(1) क्या संघ द्वारा दिये गये कारण और 2007 के अधिनियम सं 5 को उचित ठहराने व बनाये रखने के लिये और उसके द्वारा प्रस्तुत किये

गये आकडे और विभिन्न निर्णयों में निर्धारित सरकारात्मक कार्यवाही के वैध अभयास की आवश्यकताएं (उदाहरण एम. नागराज व अन्य बनाम भारत संघ व अन्य, (2006) एससीसी 212) को संतुष्ट करता है और मांगे गए प्रकार के आरक्षण के लिये एक वैध आधार प्रदान करते है, जो कि आक्षेपित अधिनियम द्वारा प्राप्त किये जायेंगे?

(2) क्या यह अधिनियम मानव अधिकारों की सार्वभौम घोषणा के अनुच्छेद 26 का उल्लंघन है, जिसमें कहा गया है कि तकनीकी और व्यावसायिक शिक्षा आमतौर पर उपलब्ध कराई जाएगी और उच्च शिक्षा योग्यता के आधार पर सभी के लिये समान रूप से सुलभ होगी?

(9) यह कहने की जरूरत नहीं है कि मामले की सुनवाई करने वाली वृहद पीठ आगे के मुद्दों या सवालों पर विचार कर सकती है।

(10) उचित आदेश के लिये अभिलेखों को भारत के माननीय मुख्य न्यायाधिपति महोदय के समक्ष रखा जाये।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी श्रीमती उपासना कावट, (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।